SHODH SAGAR®
Universal Research Reports
ISSN: 2348-5612 | Vol. 11 | Issue 5 | Oct – Dec 2024 | Peer Reviewed & Refereed

बालकों में भाषिक विकास

अन्जू रानी
anjumitter@gmail.com

DOI: https://doi.org/10.36676/urr.v11.i5.1510
Published: 29/12/2024 * Corresponding author

'बाल्यावस्था जीवन की आधारभूत अवस्था है।' जीवन के शुरू के वर्षों मे ंअभिवृत्तियों, आदतों और व्यवहार के प्रकार पक्के हो जाते हैं। बालरूप की शक्ति यही है जिसका अनुभव हम काव्य, संगीत, चित्रा एवं मूर्ति में करते हैं। भारतीय दृष्टि बाल–सौंदर्य की अनुभूति में रूप की पूर्णता उसकी शक्ति का स्रोत एवं स्वरूप है वह रूप, जिसकी पूर्णता मे ं प्रत्येक अंग अपने प्रभाव के साथ, सगीत में संवादी स्वर की भांति, अंगी में समरस हो जाता है सतंलुन, सामंजस्य आदि रूप संपदा इतनी पूर्ण कि कुछ भी चाहने को शेष नहीं रूप एवं रूपित, बाह्य और आभ्यंतर, शरीर एवं आत्मा का ऐसा आश्चर्यजनक अभेद जिसमे ंसार के सारे भेद गल गए हैं, समय की सीमा समाप्त और जीवन के अंतराल मे ंमहाकाल के लय की अनुभूति बाल–सौंदर्य द्वारा उन्मीलित लोक मे ंसत्य प्रमाणित होती है। अंतर्मन के ज्योतिर्लोक में अभूतपर्वू ज्योतियों का प्रकाश, अनुभूत आनंदों की अनुभूति, अदृष्ट दिशाओ ंका उन्मीलन, सद्यः प्रसतू रस–गंध–स्पर्श रूप–ध्वनि का प्रवाह और अंत मे, अपने ही भीतर एक नतून, आनंद–विभोर, प्रभाओं से पोषित, मानव के आविर्भाव की जाग्रत अनुभूति बाल–रूप में होती है, चाहे वह सूर का बाल रूप कृष्ण, तलुसी का बाल रूप राम–लक्ष्मण का प्रत्येक घर परिवार में जन्मा सामान्य बाल–रूपा। बाल–अनुभूति धूप सी सरल, स्पष्ट और सत्य होती है, और सरल का विश्लेषण नहीं होता। बालरूप के जादू को हम सब जानते हैं। बालरूप सक्रिय तत्व है और मन के मनोहर, मोहक भागों के लिए अभिव्यक्ति की भाषा। बालरूप बोलता है, और अव्याज मनोहर रूप तो निर्मल, निष्कलुष आत्मा की वाणी है। बाल रूप बताता ही नहीं, वह अपने सकेंतों, ध्वनियो, अंतर में अनुरणन पैदा करने की शक्ति से जताता भी बहुत कुछ है। यह कभी दृढ़ आत्मा को अपने कलेवर की गरिमा से प्रकट करता है, कभी गति से काल की लय और जीवन की ऊर्जाओं, को कभी मन के सकुमार भावों को तो कभी आत्मा के मुक्त आनंद को। बालरूप अभिव्यक्ति के लिए समर्थ माध्यम होने के कारण व्यापक तत्व हैं। जहाँ भी निर्माण, नियोजन, सृजन, व्यवस्था, विन्यास, सन्निवेश, लय गति मुक्त उतार–चढ़ाव, सज्जा, वेश–भूषा, अलंकरण और वृरतित्व की कोई विद्या, श्रृंगार की रूचि तथा अभिनव और अभिराम के लिए प्रस्ताव, वहाँ–वहाँ बाल रूप है। मन आश्चर्य से भर जाता है, आहलाद से रोमांचित हो जाता है। रग–रग और रोम–रोम में रोमांच और आनंद की हिलोर उठती है। कहीं–कहीं बालरूप इतना बहुल और महनीय हो उठता है कि वह अपने ही बंधनों को तोड़कर वह उठता है।

बाल क्रीड़ाओं में सभूंत मचलती, मदमाती, इठलाती गतियो ंका वैभव–विलास है। बाल–नृत्य मे ंगति की लोच और उसका स्पंदन आँखो ंके आगे उतर आते हैं। भुवन के समूचे विन्यास मे ंऊर्ध्वाधर गतियाँ अपने सपूंर्ण वैभव के साथ मानो गहकर ग्रथित कर दी जाती हैं अभिव्यक्ति का कोई क्षेत्र नहीं जहाँ गति न हो। व्यक्ति मे ंगर्भागमन के क्षण से मृत्यु तक हमेशा परिवर्तन होता रहता है, वह कभी एक–सा नहीं रहता। शैशवास्था और बाल्यावस्था भर उसकी शारीरिक और बौद्धिक उन्नति होती रहती है, जो कि युवावस्था की ओर बढने की निशानी है। बालक वस्तुतः एक व्यक्ति ही है। इसमें एक ओर माता के गर्भस्थ भ्रुण के अतीत के सस्ंकार हैं तो दूसरी ओर उसमें भविष्य का बालक, किशोर तथा प्रौढ. व्यक्ति की संकल्पना छिपी है। महाभारत कालीन शोधां में पता लग चुका था कि गर्भावस्था मे ंभ्रणू सीखता है। इस तथ्यात्मक

OPEN ACCESS
© 2024 Published by Shodh Sagar. This is a Gold Open Access article distributed under the terms of the Creative Commons License [CC BY NC 4.0] and is available on https://urr.shodhsagar.com

सत्य की पुष्टि 1984 मे अमरीकी मनोवैज्ञानिकों ने अपने शोधों के माध्यम से की है। चिकित्सा विज्ञान एवं मनोविज्ञान के सयुंक्त प्रयासों से इस दिशा में अन्य अन्वेषणात्मक तथ्य सामने आ रहे हैं। मनोविज्ञान वस्तुतः एक अंतरविज्ञानीय क्षेत्र है। 1940 के अंत मे भाषाविज्ञानी भाषार्जन की जिज्ञासाओ के लिए उत्पादन और बोधन के रहस्य समझने के लिए मनोविज्ञान की ओर झुके। 1950 मे थामस सीबक और चार्ल्स आसगुड ने मिलकर भाषाविज्ञान और मनोविज्ञान के बीच अंतः क्रियाओ के लिए एक समिति की स्थापना की। भाषाविज्ञान यदि भाषा की भाषाई व्यवस्था का वैज्ञानिक सिद्धान्त है तो मनोविज्ञान मानसिक प्रक्रियाओ के भाषाई ज्ञान का सिद्धाता मनो भाषाविज्ञान इन दोनों का समन्वित उपागम है। वस्तुतः मनो भाषाविज्ञान का उद्दश्ेय इस तथ्य को स्पष्ट करना है कि भाषाई ज्ञान संज्ञानात्मक व्यवस्थाओं में किस प्रकार द्योतित होता है। साथ ही, वह इन मनोवैज्ञानिक प्रक्रियाओ की ओर सकेंत करता है जो इसका उपयोग करती है। भाषा सिद्धांत तथा अधिगम सिद्धांत परस्पर सबं होकर भाषा–अधिगम के सिद्धांतों का गठन करते हैं। मनोभाषा विज्ञान का मुख्य कार्य उन समस्त मानसिक प्रक्रियाओ का विवेचन करना है, जो भाषा ज्ञान, भाषा सप्रांप्ति और भाषा–व्यवहार से सबंध है। भाषा–अर्जन मे बालक क्या अर्जित करता है, किस प्रकार अर्जित करता है तथा संदेशो के बोधन एवं अभिव्यक्ति मे इनका किस प्रकार उपयोग करता है आदि प्रमुख हैं। ए.आर.डीबोल्ड के अनुसार, 'मनोविज्ञान मुख्य रूप मे सदंेशो और मानव व्यक्तियों की विशेषताओ के मध्य संबधो से सब है, जो इस सदंश का चयन और व्याख्या करते हैं। पॉल फ्रीज के अनसुार 'मनोभाषाविज्ञान हमारी अभिव्यक्ति की आवश्यकताओं और संप्रेषण के बीच सबंधो का अध्ययन है और हमारे बाल्यकाल या बाद में सीखी गई भाषा द्वारा प्रदत्त माध्यम से सब है।'

सप्रेंषण की प्रक्रिया

मनोभाषाविज्ञान को संप्रेषण की क्रिया को ध्यान में रखना होता है। वक्ता और श्रोता अपने सदंश को जिस स्थिति में रखता है उसका प्रतिबिंब भी वहीं दर्शाता है। इस अवस्था में मनो भाषाविज्ञान दो दिशाओं मे कार्य करता है 1. मनोविज्ञान वक्ता और श्रोता की प्रक्रिया की व्यवस्था, संकेतन और विसकेंतन, मानसिक स्थिति जो भाषा के उत्पादन मे सहयोग करता है। साथ ही, यह सामाजिक या व्यक्तिगत समूहो के बीच संबधो के मानसिक प्रभाव का भी अध्ययन करता है। 2. भाषाविज्ञान भाषा के इन पक्षों का अध्ययन करता है कोड की सामान्य व्यवस्था, संदेश के घटक और इनके कोड की रूपावली की व्यवस्था, सयोजक अनुक्रम की प्रकारता और वाक्य विन्यासात्मक व्यवस्था की 'गतिकी' एवं भाषा का उद्भवा मनोभाषाविज्ञान के सामने कुछ विचारणीय समस्याएँ है, जिनके विश्वसनीय समाधान मे मनोभाषाविद लगे हुए हैं;

क. बालक अपनी मातृभाषा कैसे सीखता है ?
ख. बाल भाषा और व्यस्क भाषा मे क्या अंतर है ? पहली दूसरी मे कैसे बदलती है ?
ग. भाषा अधिगम सार्वभौमिक है तब भी यह पता लगाना कि इसका अधिगम कैसे होता है ?
घ. भाषिक रूप से अर्जित की गई और संवदेनात्मक रूप से उत्पन्न भाषा की इकाई मे क्या संबधं है ?
ड. वाक्यो का उत्पादन कैसे होता है और वे कैसे समझे जाते हैं ?

बालक के विकास का एक निश्चित क्रम है जिसमे डिंब, पिंड, भ्रणू, शिशु, बालक, किशोर और प्रौढ शामिल हैं। यह एक सतत बाह्य तथा आंतरिक परिवर्तन है जिसको देखा जा सकता है और एक सीमा तक मापा भी जा सकता है। इन परिवर्तनों मे कुछके तो स्वाभाविक होते हैं और कुछ अस्वाभाविक या कृत्रिम। जो स्वाभाविक परिवतर्न हैं उनको मनोविज्ञान मे परिपक्वन (Maturation) कहा जाता है। कृत्रिम या बाह्य वातावरण से प्रभावित होकर बालक मे जो परिवतर्न होता है उसे अभिवृद्धि और विकास कहते हैं। बालक के सपूंर्ण विकास को समझने के लिए उसकी विभिन्न अवस्थाओं के विकास की विशिष्टाएँ ये

© 2024 Published by Shodh Sagar. This is a Gold Open Access article distributed under the terms of the Creative Commons License [CC BY NC 4.0] and is available on https://urr.shodhsagar.com

ISSN: 2348-5612 | Vol. 11 | Issue 5 | Oct – Dec 2024 | Peer Reviewed & Refereed

हैं। क. बालक का व्यक्ति ख. विकास के सिद्धांत विकास की संकल्पना, विकास के कारण, विकास की गति, विकास मे ंपरिवतर्न, विकास की विशेषताएँ ग. बालक की अवस्थाएँ शारीरिक, मानसिक, संवगेात्मक, गामक तथा सामाजिक घ. आंतरिक अवयवो ंका विकास, मस्तिष्क, हृदय, माँसपेशियाँ तथा श्वसन तत्रं ड. बालक मे ंसंज्ञानात्मक विकास तथा च. बाल विकास का शैक्षिक पक्ष।

प्रत्येक मनुष्य या प्राणी विकास के एक साँचे पर चलता है। विकास की गति और सीमाएं सभी के लिए एक–सी हैं। विकास का सामान्य साँचा निम्न है :

1. 4–16 सप्ताह में 12 occul omotor muscle पर नियंत्रण।
2. 16–18 सप्ताह में गर्दन और हाथों की माँस पेशियों पर नियंत्रण।
3. 18–40 सप्ताह में पेट और हाथों पर नियंत्रण, जिसके कारण वह बैठ और खिसक सकता है,
4. 40–52 सप्ताह में पैर, अंगुलियों और अँगूठों पर नियंत्रण।
5. दूसरे साल में चल सकता है दौड़ सकता है, शब्द और पदांश बोलता है, परिवारी जनों को पहचानता है।
6. तीसरे साल में वाक्य बोलता है, शब्दों को प्रस्तुत करता है।
7. चौथे साल प्रश्न पूछता है, दैनिक कार्यों पर आत्मनिर्भर हो जाता है।
8. पाँचवे साल बालक गतिवाही नियंत्रण में पूर्णतया समर्थ हो जाता है।

बाल भाषा (Infinate Language) बोलता है और कहानी सुना सकता है। बालक का मानसिक विकास भ्रूणावस्था से प्रारंभ हो जाता है अद्यतन शोधों से ज्ञात हुआ है कि बालक का मानसिक विकास भ्रूणावस्था से ही आरंभ हो जाता है। भ्रूण मात्रा निष्क्रिय कोषों का पिंड नहीं है, अपितु वह एक नन्हें मानवीय जीवन का प्रारंभ है। माँ के गर्भ में इसका हिलना–डूलना, अँगूठा चूसना, सिर उठाना, हाथ पैर हिलाना आदि मात्र संयोग नहीं है, बल्कि अइससे अर्थपूर्ण मस्तिष्कीय गतिविधि का बोध होता है। गर्भस्थ शिशु के मानसिक विकास के संबंध में कुछ अद्यतन अनुसंधान चौंकाने वाले हैं। उत्तरी केलीफोर्निया के मनोभाषाविद एंथोनी डिथास्पर तथा उनके सहयोगी विलियम फिशर ने दस नवजात शिशुओं पर एक परीक्षण करके निष्कर्षों में कहा है कि शिशु अपनी माँ की आवाज को सुनते हैं और जन्म के बाद उनकी आवाज पहचानते हैं। अमरीकी मनोचिकित्सक तथा टोरंटो (कनाडा) में कार्यरत साइको थे टिपिस्ट – डॉ0 थामस बर्नी में एक शोधपूर्ण ग्रंथ लिखा है – 'दी सीक्रेट लाइफ ऑफ दी अन्बॉर्न चाइल्ड' इसके निष्कर्ष ये हैं;

1. गर्भवती माता के क्रियाकलापों और विचारधारा का शिशु के व्यक्तित्व पर प्रभाव पड़ता है।
2. चार–पाँच मास का भ्रूण संगीत से प्रभावित होता है।
3. माता के विचारों, भावनाओं तथा दैनिक व्यवहारों का सीधा प्रभाव भ्रूण पर पड़ता है।
4. भ्रूण मात्रा प्रेम या घृणा के प्रति प्रतिक्रिया व्यक्त नहीं करता वरन वह इनसे कहीं अधिक पेचीदा तथा रहस्यात्मक भावनाओं के प्रति भी सचेत रहता है और अपनी प्रतिक्रिया देता है।
5. अजन्मा शिशु संवेदनशील स्मरण शक्ति का धनी एक सचते प्राणी है।
6. छठे मास के प्रारम्भ से ही गर्भस्थ शिशु सुनने लगता है और माता की बोली पर हिलने–डुलने लगता है।
7. गर्भस्य शिशु बौद्धिक रूप से इतना परिपक्व होता है कि वह माता की प्रेममयी वाणी को अनुभव करता है।

गर्भावस्था में ही प्रशिक्षण

OPEN ACCESS
© 2024 Published by Shodh Sagar. This is a Gold Open Access article distributed under the terms of the Creative Commons License [CC BY NC 4.0] and is available on https://urr.shodhsagar.com

बालक के मानसि विकास की प्रक्रिया में इतना ही नहीं, जर्मन अखबार 'सर्ज' की माने तो यह कल्पना साकार हो जायेगी कि बच्चें को गर्भावस्था में ही प्राथमिक शिक्षा दी जा सकती है। गर्भ में ही प्रशिक्षिण शिशु जन्मे के बाद अचानक वयस्क जैसा नहीं दीखेगा, इसकी पूरी गारंटी जर्मन वैज्ञानिकों ने माता–पिताओं को दे दी है। सामान्य शिशुओं के जैसा ही भोलापन इन प्रशिक्षित शिशुओं में होगा।

बालकों में भाषा–अर्जन की प्रक्रिया

बालक का विकास दो प्रकार का माना जा सकता है सामान्य विकास में परिपक्वता के अनुक्रम में शरीर आदि की सहज अभिवृद्धि होती रहती है और विशिष्ट विकास में परिपक्वता के परिणाम स्वरूप जो अभिवृद्धि होती हैं, उसमें अधिगम द्वारा विशिष्टता लाई जाती है। इसमें प्रशिक्षण तथा अभ्यास का विशेष स्थान होता है। अधिगम से बालक में बौद्धिक, गत्यात्मक, संप्रत्ययात्मक, प्रत्यक्षात्मक, भाषिक, नैतिक आदि विशिष्ट विकास होता है। भाषिक विकास मानव प्राणी की विशिष्टता माना जाता है। भाषा को मानव व्यवहार की विशिष्टता कहने में भाषा की अपनी ही आंतरिक तथा बाह्य जटिल संरचना का हाथ है। प्रसिद्ध भाषा शास्त्री ब्लाक एण्ड ट्रेगर ने भाषा की परिभाषा में कहा है कि 'भाषा यादृच्छिक (माने हुए)। वाक् प्रतीकों की व्यवस्था है, जिसके माध्यम से उस भाषाई समुदाय के लोग परस्पर विचारों का आदान–प्रदान एवं सहयोग करते हैं। किन्तु, भाषा की संतुलित एवं तार्किक परिभाषा भाषा विज्ञानवेत्ता डॉ. 0 राम लखन मीना ने दी है, 'भाषा, यादृच्छिक ध्वनि वाक् प्रतीकों की वह क्रम व्यवस्था है जिसके माध्यम से समाज विशेष के लोग आपस में विचार विनिमय करते हैं, उसके माध्यम से वे अपने सांस्कृतिक – सामाजिक उद्देश्यों की संपूर्ति करते हैं। इन परिभाषाओं के आधार पर भाषा की वस्तु और रूप के संबंध में ये विशेषताएँ परिलक्षित होती है। – 1. भाषा एक क्रम व्यवस्था है 2. यह व्यवस्था प्रतीकों से बनी है 3. ये प्रतीक वाचिक है 4. वाचिक प्रतीकों तथा कथ्य के बीच संबंध यादृच्छिक माने हुए हैं, अनिवार्य या नैसर्गिक नहीं 5. भाषा का यह रूप या वस्तु एक साधन के रूप में समाज के उपयोग के लिए हे, निश्चित रूप से यह साधन मानव विकास और संस्कृति की एक विशिष्ट उपलब्धि है। इसलिए मानव शिशु भाषा सीखता है।

शिशु की भाषा संप्राप्ति की मनोवैज्ञानिक प्रक्रिया के लिए दो शब्द आजकल प्रचलित हैं 1. अर्जन 2. अधिगम भाषा अर्जन तथा भाषा अधिगम तत्वतः दो नितांत अलग प्रक्रियाएँ नहीं है।

बालक भाषा का अर्जन कैसे करता है ?

अब प्रश्न उठता है, बालक भाषा का अर्जन या अधिगम कैसे करता है ? इस संबंध में मनोविज्ञान के दो सम्प्रदायों के विचार अति महत्वपूर्ण है। व्यवहारवादी मनोविज्ञानी यह मानते हैं कि बालक के भाषा अधिगम में कोई विशिष्टता नहीं होती। भाषा भी केवल अनुभव द्वारा या अभ्यास द्वारा सीखी जाती है, अनुभव, प्रशिक्षण के द्वारा उसके मन पर कुछ भी अंकित किया जा सकता है। इसे ही अनुभववाद कहा जाता है, किन्तु संज्ञानवादियों या बुद्धिवादियों के अनुसार भाषा मानव की अपनी सम्पत्ति है। मानव शिशु भाषा अर्जन की सहजात प्रक्रिया के साथ जन्म लेता है। बालक के मस्तिष्क में पहले से ही एक प्रदत्त संसाधक यांत्रिक व्यवस्था होती है। बालक भाषा की दत्तक सामग्री को सुनता है और उसके बारे में प्राक्कल्पनाएँ करता है और मस्तिष्क के डाटा प्रोसेसिंग की सहायता से क्रमशः नियमों की सहायता से नए–नए वाक्यों की सृजना करता है। भाषा सीखने के लिए सामान्य प्रतिभा की भी जरूरत नहीं होती। बालकों के मन मस्तिष्क में एक जैविक घड़ी होती है, जो उसके भाषा–अर्जन की समय सारणी की सारणियों का निर्धारण करती है। इसलिए भाषा–अर्जन निश्चित चरणों में संपन्न होता है।

भाषा–अर्जन की इस प्रक्रिया में सर्वप्रथम जो भी भाषा अर्जित की जा रही है, बालक की एक संमाव्य अनुमेय आयु में भाषा–अर्जन के लगभग समान गुण और गति दिखाई पड़ती है। उपर्युक्त विवरण

© 2024 Published by Shodh Sagar. This is a Gold Open Access article distributed under the terms of the Creative Commons License [CC BY NC 4.0] and is available on https://urr.shodhsagar.com

से स्पष्ट है कि संज्ञानवादी या मनोवादी भाषाविद् भाषा को मानव जाति की एक विशिष्ट संपत्ति (एण्डोमेंट) मानते हैं और भाषा–अर्जन को मानव शिशु की सहजता और अनिवार्य प्रवृत्ति मानते हैं। इनके अनुसार इस अर्जन में बाह्य जगत गौण है, आंतरिक जगत ही मुख्य है। इसलिए नाअम चामस्की कहते हैं, किसी भी जीवतंत्रा को समझने के लिए उसकी आंतरिक संरचना को समझना उतना ही महत्वपूर्ण है, जितना कि बाह्य उद्दीपनों या प्रेरणाओं को समझना।' संज्ञानवादी इन धारणाओं से मिलती–जुलती बातें ही मनोभाषाविज्ञानी कहते हैं। इनकी मान्यता है कि शिशु में सहज भाषा–अर्जन की व्यवस्था होती है, इसका आधार है, बालक का जैविक विकास।

भाषा–अर्जन एक विशिष्टता है। पशु–पक्षियों में भी संप्रेषण–क्षमता होती है, किन्तु वाग्यंत्रों पर नियंत्रण करके बोलने योग्य ध्वनियों की श्रृंखला उत्पन्न करना मनुष्य जाति की विशेषता है। इस प्रक्रम से वह भाषा के नियमों की खोज नही करता, अपितु उसके मस्तिष्क में पहले से ही ये नियम विद्यमान रहते हैं। शिशु के मस्तिष्क की तुलना कम्प्यूटर तकनीक से की जाती है। कम्प्यूटर में पहले से ही सामग्री भरी जाती है, बाद में संसाधन के माध्यम से वांछित परिणाम निकाले जाते हैं। उसी प्रकार शिशु का मस्तिष्क जैविक रूप से अभिक्रमित होता है अर्थात शिशु में जन्म से ही एक जैविक उपकरण होता है, जो भाषा अर्जन में सहायक होता है। इस अपरेटस में पहले से ही भाषा–नियम या अर्जन संबंधी निर्देश भरे होते हैं। जब वह भाषा का प्रयोग करता है, तो स्वतः खोजे गए नियमों के आधार पर नए वाक्य नहीं बनता, अपितु उसके मस्तिष्क के पूर्व से ही विद्यमान नियमों को भाषा प्रयोग द्वारा निश्चित करते हैं। ये नियम उसके मस्तिष्क में किस रूप में रहते हैं, इसके लिए भाषा–अर्जन युक्त की बात की जाती है।

उपरोक्त दोनों मतों पर चिंतन के उपरांत हम पाते हैं कि भाषा–अर्जन में व्यवहारवादी और संज्ञानवादी विचारधाराओं के अपने–अपने अभिमत हैं। किन्तु शिशु में भाषा–अर्जन के सहजात गुणों को मानते हुए भी उन गुणों को सचेत या जाग्रत करने के लिए अभ्यास की आवश्यकता होती है और वातावरण के प्रति प्रतिक्रिया व्यक्त करना भी अनिवार्य होता है। वातावरण के भाषाई अनुकूल तथा प्रतिकूल तत्वों का बालक के भाषिक विकास पर प्रभाव पड़ता हुआ देखा जाता है। कहने का तात्पर्य यह है कि बालक के भाषा–अर्जन के सिद्धान्त को एकांगी दृष्टिकोण के बजाय बहुआयामी दृष्टिकोण से देखने की आवश्यकता है। बालकों के भाषिक विकास की प्रक्रिया में भाषा–अर्जन और संप्रेषण पर निमन बिन्दुओं के आधार पर विचार करना समीचीन होगा;

क. बाल–विकास और भाषा–अर्जन
ख. सामान्य बालक का भाषिक विकास–ध्वनि विकास, शब्दावली विकास, वाक्य विकास, बोधन–विकास, आर्थिक–विकास, भाषिक संप्रेषण–विकास
ग. अवाचिक संप्रेषण का विकास
घ. भाषा विकास में सर्वभाषा तत्व

बालविकास और भाषा अर्जन :

सामान्य तथा असामान्य बालक के शारीरिक, मानसिक, संवेगाात्मक, गामक तथा सामाजिक विकास की विशिष्टताओं से बालक की भाषा अधिगम प्रक्रिया प्रतिबंधित है। विकास की एक विशिष्ट स्थिति में विशिष्ट वस्तु का अधिगम संभव है। आयु के साथ विकास में परिवर्तन होते हैं। परिवर्तनों के अभिलक्षणों के अनुरूप अधिगम प्रक्रिया संपन्न होती है। बालकों का भाषा अर्जन भी विकास निरपेक्ष नहीं हो सकता। भाषिक विकास में अर्जन और अधिगम प्रक्रियाओं को समझने के लिए बालक के विकास में विविध पक्षों में जो परिवर्तन, अभिवृद्धि, परिपक्वता आदि के कारण होते हैं, उनके आधारों को ध्यान में रखना आवश्यक है। शारीरिक परिपक्वता किसी कार्य को सीखने के लिए उतनी ही आवश्यक है, जितनी मानसिक

© 2024 Published by Shodh Sagar. This is a Gold Open Access article distributed under the terms of the Creative Commons License [CC BY NC 4.0] and is available on https://urr.shodhsagar.com

ISSN: 2348-5612 | Vol. 11 | Issue 5 | Oct – Dec 2024 | Peer Reviewed & Refereed

परिपक्वता। जब तक शरीर तथा माँसपेशियाँ परिपक्व नहीं हो जातीं, तब तक किसी प्रकार के व्यवहारों में संशोधन नहीं होता। मनोवैज्ञानिक वोरिंग तथा लांग फील्ड के अनुसार, परिपक्वता एक ऐसा विकास है, जिसका अस्तित्व सीखी जाने वाली क्रिया या व्यवहार से पूर्व होना आवश्यक है। बालक के भाषा अर्जन का संबंध उसके शारीरिक विकास से है। इसे बालक में हुए ध्वनियों के विकास से भली भांति जाना जा सकता है। उच्चारण संबंधी अवयवों एवं माँसपेशियों को ठीक संचालन करना बालक जब तक नहीं सीखता, तब तक वह ध्वनियों का उचारण नहीं देख सकता। भाषिक विकास की इस नैसर्गिक प्रक्रिया में शिशु सबसे पहले 'स्वरों' का उच्चारण करता है।

शिशु सर्वप्रथम औच्चारणिक दृष्टि से सुगम, सरल और कोमल 'अ' या 'आ' ध्वनियाँ उच्चारित करता है। बालक 'इ' या 'उ' अथवा 'ए' का उच्चारण अपेक्षाकृत कठिन होने के कारण उच्चारण नहीं कर सकता। इसका कारण है स्वर उसकी स्वर तंत्रिकाओं का अविकसत होना। उच्चारण स्थान और उच्चारण विधि के ठीक काम करने के लिए वागिंद्रियों की माँसपेशियों का परिपक्व होना आवश्यक है। बालक 16–18 मास में जाकर अ,

सन्दर्भ

1. राम मनोहर लोहिया, ''गाँधीजी के दोष'', समता और सम्पन्नता (इलाहाबाद : लोकभारती, 1992), सं0 – ओंकार शरद पृ0 208
2. रवीन्द्रनाथ टैगोर, 'समस्या', रवीन्द्रनाथ के निबंध, भाग–1, (दिल्ली : साहित्य अकादमी, 2009)
3. लोहिया, ऊपर संदर्भ 9, पृ0 209

© 2024 Published by Shodh Sagar. This is a Gold Open Access article distributed under the terms of the Creative Commons License [CC BY NC 4.0] and is available on https://urr.shodhsagar.com